उत्तरप्रदेश राज्य

बनाम

अजय कुमार

(आपराधिक अपील सं. 277/2008)

7 फरवरी, 2008

(डॉ. अरिजीत पसायत और पी. सदाशिवम)

दण्ड संहिता, 1860-धारा 394,307 और 411-अभियोजन अन्तर्गत-नोट मुद्रा लूटने का आक्षेप-पीडित को क्षति-अभियुक्त से आंशिक बरामदगी-बरामदशुदा नोटों पर बैंक से आहरित जाने की सील-विचारण न्यायालय द्वारा बरी-उच्च न्यायालय द्वारा बरी का आदेश मात्र इस आधार पर कि अभियुक्तगण से बरामदगी और उनकी गिरफतारी संदिग्ध है, पुष्ट किया गया- अपील में, निर्णित: उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया आधार अपास्त किये जाने योग्य-अन्य महत्वपूर्ण कारक नजरअंदाज किये गये-मामला उच्च न्यायालय को पुर्नविचार हेतु प्रेषित।

प्रतिवादी अभियुक्त पर धारा 394,307 और 411 भा दं सं का मुकदमा था। अभियोजन मामला यह था कि जब पी.ड.-1 (सूचनाकर्ता) पी.ड.-2 के साथ पैसा बैंक से आहरित करके जा रहा था, तब प्रतिवादी अभियुक्त ने अन्य तीन लोगों के साथ पिस्तौल से फायर करते हुये पैसे को छीन लिया। पी.ड.-1 और पी.ड.-2 के चोटें आयी। अभियुक्तगण से बरामद की गई आंशिक नोट मुद्रा पर बैंक की सील थी। विचारण पूर्ण होने से पहले दो अभियुक्तगण की मृत्यु हो गई तथा एक फरार हो गया। विचारण न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता को बरी किया गया। उच्च न्यायालय ने राज्य की अपील

इस आधार पर खारिज कर दी कि गिरफतारी एवं बरामदगी संदिग्ध थी क्योंकि रिश्तेदार के द्वारा भेजे गये टेलीग्राम को दृष्टिगत रखते हुये गिरफतारी की दिनाँक संदिग्ध थी। वर्तमान अपील पेश की।

इसलिये वर्तमान अपील की अनुमति देते हुये और उच्च न्यायालय को मामला पुनर्विचार हेतु प्रेषित करते हुये, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि-

1. उच्च न्यायालय का निष्कर्ष स्पष्ट रूप से पूर्व अनुमानित है। उच्च न्यायालय द्वारा जिन तत्वों को आधार बनाया गया वे तत्व अभियोजन पक्ष का संस्करण अस्वीकार्य करने और विचारण न्यायालय के बरी के आदेश को सही ठहराने के लिये पर्याप्त नहीं है। आलोच्य आदेश से पता चलता है कि एकमात्र आधार जिस पर उच्च न्यायालय ने पाया कि हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं थी, वह एक रिश्तेदार द्वारा भेजा गया टेलीग्राम था। विवाद पर प्रकाश डालने वाले कई अन्य कारकों पर उच्च न्यायालय द्वारा उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया है। दोनों पीड़ितों की साक्ष्य और बरामदशुदा राशि के अंश की बरामदगी के प्रभाव को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि ट्रायल कोर्ट और हाई कोर्ट ने जो नोट किया था, उसके विपरीत, जब्त किए गए रिकवरी नोटों पर उस बैंक की मुहर स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जहां से पैसा निकाला गया था। ट्रायल कोर्ट और हाई कोर्ट द्वारा इस कारक की प्रासंगिकता को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है। [पैरा 6 और 8] [557-ई, जी; 558-ए, बी]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या 277/2008।

इलाहाबाद उच्च न्यायलय के जी.ए.नं. 58/2003 में अन्तिम निर्णय एवं आदेश दिनाँक 04-09-2006 के विरूद्ध।

एसजी हुसैन, मनोज के मिश्रा, अनिल कुमार झा अपीलार्थी की ओर से।

के. शारदा देवी प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय डॉ. अरिजीत पसायत, जे. द्वारा दिया गया-

1. अनुमति दी गयी।

2. इस अपील में चुनौती इलाहाबाद उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा पारित आदेश को दी गई है, जिसमें अपीलकर्ता-राज्य द्वारा विचारणीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए बरी के आदेश की शुद्धता पर सवाल उठाते हुए दायर अपील को खारिज कर दिया गया था। मूल रूप से, प्रतिवादी के अलावा तीन व्यक्तियों को अभियुक्त व्यक्ति के रूप में संयोजित किया गया था। उनमें से दो की विचारण पूरी होने से पहले ही मृत्यु हो गई और एक फरार हो गया और उसे गिरफ्तार नहीं किया जा सका।

चार व्यक्तियों को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में भा.दं.सं.) की धारा-394, 307, 411 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए मुकदमे का सामना करना पड़ा। आरोप था कि दिनांक 15.3.1994 को जब सूचनाकर्ता श्री गोपाल के पुत्र सुशील कुमार के साथ भारतीय स्टेट बैंक से 1,25,000/- रुपये आहरित कर दुकान की ओर जा रहा था, तब आरोपियों ने उनके पास मौजूद पिस्तौलों से गोलियां चलाने के बाद पैसे जबरन छीन लिए। सूचनाकर्ता और उपरोक्त सुशील कुमार को चोटें आईं और उन्हें इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और अनुसंधान किया गया और पैसे का कुछ हिस्सा अभियुक्तगण से बरामद किया गया। अभियोजन पक्ष ने स्वयं का पक्ष साबित करने के लिए कई गवाहों को परीक्षित कराया।

पीडब्लू 1 और 2 यानी भगवत नारायण और सुशील कुमार को घटना में चोटें लगने की बात कही गई थी। विचारण न्यायालय ने मुख्य रूप से इस आधार पर बरी करने का आदेश दिया कि गवाहान उन मुद्रा नोटों पर संख्याओं के संबंध में निश्चित रूप से नहीं बता सके, जिनके बारे में कहा गया था कि वे बैंक से निकाले गए थे और आरोपी व्यक्तियों द्वारा लूट लिए गए थे। बरी करने के निष्कर्षों की भ्रांति को दिखाने के लिए इसे उजागर किया गया था।

निर्णय की शुद्धता पर सवाल उठाने वाले कई अन्य कारकों का भी संकेत दिया गया। अपील उच्च न्यायालय की अनुमति से दायर की गई थी और उसे निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ खारिज कर दिया गया था:

> "..हमने फैसले का अध्ययन किया है। जिसके अवलोकन से पता चलता है कि चंदेश रावत (मृत) के रिश्तेदार प्रेम नारायण ने 17.3.1994 को संबंधित वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक को एक टेलीग्राम किया था, जिसमें कहा गया था कि चंदेश रावत को महुरानी पुलिस के द्वारा उसके घर से गिरफ्तार कर लिया गया है और पुलिस ने गिरफ्तारी की तारीख 20.3.1994 दिखाई है, इसलिए गिरफ्तारी के साथ-साथ बरामदगी भी संदिग्ध हो जाती है।
>
> मामले को देखते हुए बरी करने के आदेश में कोई हस्तक्षेप उचित नहीं है।
>
> अपील करने की अनुमति एतद्द्वारा अस्वीकार की जाती है।"

3. अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार नहीं बताया है कि ट्रायल कोर्ट सही था। वास्तव में

पीड़ितों के साक्ष्यों का कोई विश्लेषण नहीं किया गया था, जिन्होंने स्पष्ट रूप से अभियुक्तगण के द्वारा निभाई गई संबंधित भूमिका का विस्तार से वर्णन किया था।

4. दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि बरी करने के आदेश को आक्षेपित आदेश द्वारा अपील को खारिज करने के आदेश द्वारा प्रबलित किया गया था और इसलिए किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

5. बरी किए जाने के खिलाफ अपील करने की अनुमति से निपटते समय, इस न्यायालय ने *राजस्थान राज्य बनाम सोहन लाल* (2004 (5) एससीसी 573) मामले में अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रतिपादित किया कि:

> "3. हमने दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील की दलीलों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है। यह न्यायालय ने *उड़ीसा राज्य बनाम धनीराम लुहार* मामले में (2004 95) एससीसी 568) ने पिछले दो दशकों से पहले के मामलों में व्यक्त दृष्टिकोण को दोहराते हुए ऐसे मामलों के निस्तारण में कारण दर्ज करने के लिए उच्च न्यायालय की आवश्यकता, कर्तव्य और दायित्व पर जोर दिया है। न्यायिक मंच द्वारा किसी निर्णय/आदेश और न्यायिक शक्ति के प्रयोग की पहचान उसके निर्णय के कारणों का खुलासा करना है और कारणों को बताने पर हमेशा मजबूत प्रशासन न्याय-वितरण प्रणाली के बुनियादी सिद्धांतों में से एक के रूप में जोर दिया गया है, ताकि यह ज्ञात हो सके न्यायालय के समक्ष इस मुद्दे पर और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में उचित दिमाग का उपयोग किया गया था। तथ्य यह है कि बरी करने के आदेश के खिलाफ राज्य के द्वारा अपील पर विचार करने के लिए गुणावगुण के आधार पर उस पर प्रभावी विचार करना उच्च न्यायालय से अपील करने की अनुमति प्राप्त

करने की प्रारंभिक प्रक्रिया के अधीन है, निम्न गुणवत्ता या ग्रेड की अपील के रूप में मानें, इसका कोई कारण नहीं है, जब इसे विशेषकर वैधानिक रूप से प्रदान किया गया हो, या कारण दर्ज करने की स्पष्ट आवश्यकता को दूर करने और दूर करने के लिए पर्याप्त हो। किसी भी न्यायिक शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए और केवल यह तथ्य कि विवेक न्यायालय/मंच के पास किसी भी तरह से प्रयोग करने के लिए निहित है, इसे सनक या इच्छानुसार और मनमाने ढंग से प्रयोग करने के लिए कोई लाइसेंस नहीं बनता है जैसा कि प्रसिद्ध कहावत से अच्छी तरह से बताया गया है-"चांसलर के पैर के अनुसार भिन्न होता है।" मनमानी को हमेशा किसी भी शक्ति के न्यायिक अभ्यास का अभिशाप माना गया है, खासकर तब जब ऐसे आदेशों को उच्च मंचों के समक्ष चुनौती दी जा सकती है। राज्य किसी आपराधिक मामले या अपील को आगे बढ़ाने या संचालित करने में अपने स्वयं के किसी भी अधिकार का समर्थन नहीं करता है, बल्कि वास्तव में बड़े पैमाने पर समाज के हित की पुष्टि करता है, ताकि पुनरावृत्ति को रोका जा सके और साथ ही समाज में सुव्यवस्था बनाए रखने के लिए क्रमशः अपराधों और अपराधियों को दंडित किया जा सके जिससे कानून का शासन कायम हो और अराजकता ना फैले। अपील करने की अनुमति मांगने का प्रावधान यह सुनिश्चित करने के लिए है कि बरी किए जाने के आदेशों के खिलाफ कोई भी तुच्छ अपील दायर न की जाए, लेकिन यह उच्च न्यायालय को केवल पूर्वनिर्धारित टिप्पणियों के माध्यम से अनुमति देने से इनकार करने में सक्षम नहीं बनाता है, जैसा कि इस मामले में ("अदालत को कोई त्रुटि नहीं मिली"), इसके अतिरिक्त, प्रथम दृष्टया, मस्तिष्क के प्रयोग का कोई संकेत नहीं है। वह भी जब उच्च न्यायालय के

आदेशों को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जा सकती है। इस तरह की कर्मकांडीय टिप्पणियाँ और संक्षिप्त निस्तारण, जिसका प्रभाव कभी-कभी होता है, और जैसा कि इस मामले में है, अपील के वैधानिक अधिकार को बंद करना, हालांकि एक विनियमित है, अदालतों के समक्ष दावे का विवेकपूर्ण तरीके से निस्तारण करने वाला उचित और न्यायिक तरीका नहीं कहा जा सकता है। किसी निर्णय के लिए कारण बताना अदालतों के समक्ष किसी मामले के न्यायिक और विवेकपूर्ण निस्तारण का एक अनिवार्य गुण है, और जो किए गए कार्य के तरीके और गुणवत्ता के बारे में जानने का एकमात्र साधन है, साथ ही यह तथ्य भी है कि संबंधित अदालत ने वास्तव में मस्तिष्क का उपयोग किया था। वह भी जब अपील करने की इजाजत देने से इनकार करने पर विचारण न्यायालय के फैसले की जांच की गुंजाइश प्रथम अपीलीय अदालत के द्वारा सर्वदा के लिए बंद हो जाती है। हमारे विचार में, अपील की अनुमति देने से इनकार करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष के कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता का इस तथ्य से कोई लेना-देना नहीं है कि अपील की परिकल्पना धारा 378 दं प्र सं अदालत से छुट्टी मांगने और प्राप्त करने पर निर्भर है। इस न्यायालय ने बार-बार कहा है कि प्रथम अपीलीय अदालत के रूप में उच्च न्यायालय, यहां तक कि बरी किए जाने के खिलाफ अपील से निपटते समय भी हकदार है और साथ ही बाध्य भी है कि वह संपूर्ण साक्ष्यों की जांच करे और यदि आवश्यकता हो तो उनकी फिर से सराहना करे, हालांकि चुनते समय केवल इसलिए हस्तक्षेप करें कि अदालत को रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों के आधार पर अपराध का पूर्ण आश्वासन मिलना चाहिए, न कि केवल इसलिए कि उच्च न्यायालय केवल एक और संभावित या अलग दृष्टिकोण अपना सकता

है। उपरोक्त को छोड़कर, जहां अपील पर विचार की सीमा और गहराई का मामला है, किसी अपील से निपटने में दृष्टिकोण में कोई भेद या अंतर की परिकल्पना नहीं की गई है, केवल इसलिए कि एक दोषसिद्धि के खिलाफ था या दूसरा बरी होने के खिलाफ था।"

(जोर देने के लिए रेखांकित)

6. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च न्यायालय का निष्कर्ष स्पष्ट रूप से पूर्व अनुमानित है और केवल यह दावा कि मृतक-अभियुक्त चंदेश रावत के रिश्तेदार द्वारा एक टेलीग्राम भेजा गया था, यह मानने का आधार नहीं हो सकता था कि अभियोजन पक्ष का संस्करण अस्वीकार्य था और विचारण न्यायालय ने बरी करने का सही आदेश दिया था।

7. दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान वकील ने कहा कि न केवल टेलीग्राम के आधार पर, बल्कि अन्य आधारों पर भी, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण को बरकरार रखा।

8. ऊपर दिए गए आलोच्य आदेश को पढ़ने से पता चलता है कि एकमात्र आधार जिस पर उच्च न्यायालय ने पाया कि हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं थी, वह एक रिश्तेदार द्वारा भेजा गया टेलीग्राम था। विवाद पर प्रकाश डालने वाले कई अन्य कारकों पर उच्च न्यायालय द्वारा उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया गया है। दोनों पीड़ितों की साक्ष्य और बरामदशुदा राशि के अंश की बरामदगी के प्रभाव को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि ट्रायल कोर्ट और हाई कोर्ट ने जो नोट किया था, उसके विपरीत, जब्त किए गए रिकवरी नोटों पर उस बैंक की मुहर स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जहां से पैसा निकाला गया था। ट्रायल कोर्ट

और हाई कोर्ट द्वारा इस कारक की प्रासंगिकता को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है।

9. तदनुसार, हम उच्च न्यायालय के विवादित आदेश को अपास्त करते हैं और मामले को कानून के अनुसार विचार के लिए वापिस भेजते हैं।

10. अपील स्वीकार की जाती है।

अपील स्वीकृत है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी माधवी मोदी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।